रिहाई

भालचंद्र जोशी

रिहाई

अब्दुल खान मास्टर साहब मस्जिद से बाहर आए तो रात गहरी हो चुकी थी। ऐसी मजहबी बैठकों में पहले वे कभी शामिल नहीं हुए थे। इधर कुछ समय से उनका मन

बहुत आंदोलित था। गोधरा कांड के बाद गुजरात में हुए दंगों ने उन्हें भीतर तक विचलित कर दिया है। वे हमेशा एक अनाम भय की दीवार से माथा टेके रहते हैं। बाजार में बड़े मौलवी पिछले दिनों मिल गए थे। बड़े मौलवी ने उनके मन के विचलन को एक बड़े भय की चुटकी से मसल दिया था। उन्हें मौलवी की बातें रात गए तक करवट बदलने के लिए विवश करती रही।

अलग-अलग रहोगे तो खत्म हो जाओगे। सबके साथ रहोगे तो छोटा दिलासा भी बड़ा हथियार महसूस होगा।

बात ठीक थी। ऐसा उन्होंने सोचा। फिर धीरे-धीरे वे इन बैठकों के स्थायी श्रोता हो गए। भय से बचने के लिए ऐसी बैठकों की बहसों से राहत बटोर लाते हैं। ऐसी राहत जो उनकी सूनी और अकेली रातों में पीठ थपथपाया करती है। आज भी जब वे मस्जिद से बाहर आए तो उनका मन शांत था। पर आज एक ऐसे नए शब्द से उनका साबिका पड़ा था जो उन्होंने पहले सुना तो कई दफा था लेकिन मौजूदा हालात से उसकी संगत नहीं बैठा पा रहे हैं। वे पक्के नमाजी हैं। पाँचों वक्त की नमाज कायदे से अदा करते हैं। मजहब के जानकार हैं लेकिन आज जिस लड़ाई और मजहब से उसके ताल्लुकात की बात सुनी तो थोड़ा अजीब-सा लगा। फिर उन्हें लगा, इस उम्र में इस तरह जज्बाती होना ठीक नहीं। जान है तो जहान है। जिहाद! यह जज्बाती दलीलों से ऊपर है। यह शब्द रह-रहकर उनके जेहन में टकराता है। बार-बार टकराने से उस शब्द के लिए वहाँ जगह बनने लगी। इस शब्द में एक ऐसी नवजात तसल्ली थी जो एक घनी सुरक्षा छाँह तक ले जाती है।

सुनसान सड़क पर स्ट्रीट लाइट की रोशनी फैली हुई थी। बारिश बंद हो चुकी थी। गीली सड़क के किनारे आइसक्रीम के खाली टीन पड़े थे। इन सबसे अविचलित एक अलसाया कुत्ता वहीं लेटा था। भारी आलस्य और क्षीण-सी उदासी के साथ कुत्ते ने सिर उठाकर उन्हें देखा और फिर लेट गया। कुछेक जगह से सड़क उखड़ी पड़ी है। उखड़ी पड़ी सड़क को पानी ने अपने डबरों से समतल कर दिया था। उन्हें याद आया कि घर पर बीवी और बेटी अकेले हैं तो इस ख्याल ने जाने किस आशंका को हिलाया कि उनके कदम तेज हो गए। हालाँकि उन्हें अब भरोसा है कि उनके साथ पूरी कौम है। किसी भी खतरे में सारे लोग साथ हैं। भावुकता से परहेज पालने की शीघ्रता में वे एक दूसरी भावुकता की शरण में चले गए। कौम के साथ होने का घातक भरोसा मन को मिलने पर वे गली में इत्मीनान से मुड़े। घर के आगे वे ठिठक गए। कबूतरों के दड़बों में उनकी आहट से हलचल हुई। दड़बे कबूतरों की फड़फड़ाहट से भर गए। अब्दुल खान मास्टर साहब ने पुचकार की अजीब-सी आवाज निकाली। फड़फड़ाहट बंद हो गई।

जैसा कि उन्हें मालूम था, घर पर कोई सोया नहीं था। बीवी और बेटी दोनों जाग रहे थे। बीवी ने अलसाई आँखों से उन्हें देखा और ट्यूबलाइट जला दी। कमरे में ज्यादा रोशनी हो गई। ज्यादा रोशनी ने उनकी एकाग्रता और सोच के अकेलेपन को भंग कर दिया। वे थोड़े असहज हो गए।

- "खाना नहीं खाऊँगा।" वे बोले।

बीवी बिस्तर ठीक करने लगी। उसने खाने के लिए आग्रह नहीं किया। जैसा कि अनुमान था, थोड़ी देर बाद बीवी ने बत्ती बुझा दी। कमरे में एक बेहद छोटा-सा बल्ब जलने लगा। नाकाफी रोशनी में बीवी और बेटी के चलने-फिरने से दीवारों पर परछाइयाँ भी चलने-फिरने लगी। एकाएक घर में जैसे काफी लोग चलने-फिरने लगे। उन्हें लगा कि जीवन में भी ऐसा ही है। हल्के अँधेरे में कई परछाइयाँ चल-फिर रही हैं। फिर धीरे-धीरे एक परछाईं उनके पास आकर लेट गई। उनकी बीवी। परछाईं उनके भीतर लेट गई। वे ठीक से पहचान नहीं पा रहे हैं। बड़े मौलवी हैं या काजीजी। या फिर वह अधेड़ आदमी जो उन्हें आज नया लगा था। पहली बार उसे मस्जिद में देखा था।

एकदम धुली हुई उर्दू बोल रहा था। ऐसी उर्दू यहाँ इस शहर में तो क्या पूरे प्रदेश में किसी को बोलते नहीं देखा। वह कहीं बाहर से आया है - पक्का! कहाँ से? मौलवी साहब ने कुछ साफ कहा नहीं। सबके साथ बैठा था पर अजीब ढंग का छुपाव था उसमें। कुरआन का जानकार था लेकिन चेहरे पर मजहबी सुकून का नूर नहीं था। एक ठंडी कठोरता थी। इन सबके बावजूद उसकी बातों में उसकी दलीलों में दम था। इतने निरपराध लोगों के दंगों में मारे जाने, जला दिए जाने को कैसे भुलाया जा सकता है? मुस्लिमों के मुहल्ले के मुहल्ले खत्म हो गए हैं। उसने यह भी बताया था कि नगर निगम से वोटर लिस्ट लेकर उसमें से मुस्लिम बहुल मोहल्लों को छाँटकर अलग किया फिर हिंसा की मुहिम चलाई गई थी। कह रहा था कि इसकी योजना महीनों पहले से चल रही थी। घोर मुस्लिम विरोधी पुलिस अफसरों की तैनाती की गई। जिले के ऐसे बड़े अफसरों को लाया गया जो इस काम में मददगार हुए। वह बंदा बता रहा था कि इस मुहिम में दया रहित आक्रमण के लिए पुलिस और दंगाइयों को हिदायतें दी गई थीं। औरतों और बच्चों को छोड़ने में वक्त जाया मत करो। गेहूँ के साथ घुन भी पिसता है। मस्जिद में खड़ा वह बंदा जिस मार्मिक ढंग से बता रहा था तो सुनने वालों की रंगों में आँच दौड़ने लगी थी।

उन्होंने करवट ली। वह परछाईं जैसे उनके भीतर भी करवट ले रही है। एक अनाम उबाल अपने भीतर महसूस किया। जल्दी ही उन्हें कोई बड़ा काम सौंपा जाएगा। वे

स्कूल मास्टर हैं। उन पर कौन शक करेगा? इतने बरसों की मुदर्रिसी में यह नया पाठ सीखा। आक्रमण के लिए अब हिंसक नजर आने की बजाय मासूम नजर आना जरूरी है। मास्टर साहब ने खुद को समझाया और राजी किया। कौम की भलाई के लिए, अल्लाह के बताए रास्ते पर चलना उन्हें जरूरी लगा। दंगों के बाद शहर में हर जगह जिस तरह बात-बेबात अपमान झेलना पड़ता है, उसकी भी टीस घर करती जा रही है। सिर्फ उनका मजहब जानकर ही लोग अकारण संदिग्ध हो जाते हैं। फिर यह संदेह अब धीरे-धीरे एक स्थायी घृणा में बदल रहा है। पहले लोग घृणा मन में रखते थे। प्रकट नहीं करते थे, लिहाज में चुप रहते थे लेकिन अब तो जिस निर्लज्ज तरीके से अपनी घृणा प्रकट करते हैं वह बहुत पीड़ादायी है। धर्म का नाम जुड़ते ही वे अपराधी हो जाते हैं। देशद्रोही कहलाते हैं।

हमेशा की तरह सुबह वे जल्दी उठ गए। बड़ी फज्र की नमाज अदा करने मस्जिद तक जाना है। तैयार होकर वे मस्जिद पहुँचे तो वहाँ सारी तैयारी थी। नमाज अदा करके वे मस्जिद के आँगन में आए और अपनी टोपी को तह करने लगे। जाने की जल्दी नहीं है लेकिन आदतन आँखें चप्पलें तलाशने लगीं। तभी बड़े मौलवी ने आकर उनके कंधे पर हाथ धरा। यह रुकने का संकेत है। बड़े मौलवी के भारी हाथ का दबाव उनके कंधे पर था।

वे बड़े मौलवी के साथ चल दिए। मस्जिद के पिछवाड़े में एक बड़ा हॉल है। जिसमें मोहर्रम के दिनों में ताजिये बनाए जाते हैं। उसी हॉल के कोने में कबाड़ को हटाकर वे एक अँधेरे रास्ते से नीचे उतरे। नीचे भी हल्का अँधेरा है। हल्के अँधेरे में सारे हथियार चमक रहे हैं। कुछ की चमक ज्यादा असरदार होंगी इसीलिए वे तहखाने के नीम अँधेरे में बोरों में बंद हैं।

वे देखकर दंग रह गए। इतना बड़ा जखीरा। कितनी लंबी लड़ाई है? उन्होंने पूछा नहीं लेकिन उनके अचरज ने मौलवी साहब को समझा दिया। मौलवी साहब चलते-चलते कुछ कहने के लिए रुक गए। जैसे इस तहखाने में कहने की सुविधा हो। कहा गया भी इसी तहखाने में बंद रह जाएगा। मोलवी साहब कथन को गोपनीय रखने की अपेक्षा कैद रखना चाहते थे। उनका कहा गया जैसे इन हथियारों के बीच सुरक्षित भी रहेगा और कैद भी।

- "ऐसी लड़ाइयाँ कोई एक दिन में खत्म नहीं होती हैं।" मौलवी साहब ने कहा और उनके चेहरे पर शाइस्तगी आ गई। उनका लंबा चेहरा उनके लम्बे कद पर थोड़ा-सा तन गया। मौलवी साहब के तने चेहरे पर बहुत कुछ अनकहा जमा है। खान मास्टर

साहब चलते हुए थोड़ा लड़खड़ा गए। जैसे ठोकर लगी हो। हालाँकि जहाँ वे लड़खड़ाकर रुके वहाँ कुछ नहीं है। तहखाने की खाली जमीन पर शायद मौलवी साहब के चेहरे का तनाव गिर पड़ा था। वह अनकहा जो उनके चेहरे पर जमा था। मौलवी साहब ने फिर से उनके कंधे पर हाथ धर दिया। वे जान गए कि पैर लड़खड़ाकर सँभल गए हैं लेकिन खान मास्टर साहब के भीतर मन में भी कुछ लड़खड़ा गया है। हाथ के धरने से ही जैसे भीतर की लड़खड़ाहट सँभल जाएगी। मौलवी साहब ने मास्टर साहब को देखा और फिर कंधा थपथपाया। इस तरह पैरों की लड़खड़ाहट में छिपी मन की कमजोरी को सँभालने की हिदायत दी। यह हिदायत थी। इसमें हमदर्दी की गुंजाइश नहीं थी। बल्कि इस बेआवाज थपथपाहट में उनकी लड़खड़ाहट के लिए मौलवी साहब की अरुचि और हल्की-सी नाराजगी की गूँज भी है।

मस्जिद से बाहर आकर मास्टर साहब थोड़ी देर रुक गए। अगस्त की सुबह की नमी उनके चेहरे से टकराई। तहखाने का दमघोंटू माहौल से जैसे नजात मिली। रात को बारिश हुई थी। टूटी सड़क के डबरों में बच्चे कूदकर पानी के छींटे उड़ा रहे हैं। बहुत खुलेमन से बच्चे ही हैं जो बारिश का आनंद उठाते हैं। आते-जाते लोग बच्चों की बदमाशी से बचकर निकल रहे हैं। बच्चे इस बात से भी बेपरवाह हैं। बच्चों की बदमाशी से बचकर जाने वाला एक आदमी सड़क के किनारे हो गया। मास्टर साहब ने देखा, सफेद-कुर्ता पाजामा वाले इस व्यक्ति के पीछे रबर की चप्पलें पहने होने के कारण पीठ तक कीचड़ के छींटे चिपके हैं। कपड़ों पर सामने नजर आ रही सफेदी पर मुग्ध और उसी के लिए चिंतित वह आदमी अपनी पीठ पर उड़े कीचड़ से अनजान बहुत सावधानी से चल रहा है।

मास्टर साहब को क्षण भर के लिए लगा कि वे भी इसी तरह अपनी पीठ से अनजान हैं, फिर उन्होंने सावधानी से चलना छोड़कर सोचना शुरू कर दिया। उनकी चाल धीमी हो गई। जैसे धीमे चलने से सोचने में सुविधा होती हो। उन्हें याद आया कि अबके बारिश में मकान की मरम्मत करानी थी। मौलवी साहब ने मदद का भरोसा दिया है। हालाँकि मकान ऐसा कोई टूटा-फूटा नहीं है। बस, कभी-कभार ज्यादा बरसात में छत टपकने लगती है। इस ओर कभी उनका तो ध्यान नहीं गया था। अनवर भाई जान ने मौलवी साहब को बताया था। मौलवी साहब ने उन्हें उलाहना दिया था कि आप तो कौम के लोगों को ही पराया समझते हैं। हम आपकी मदद को आगे नहीं आएँगे तो कोई दूसरा आएगा? बात इतनी बड़ी नहीं थी पर हमदर्दी बड़ी थी। उन्हें अच्छा लगा कि मौलवी साहब उनके बारे में इतना सोचते हैं। आज पता नहीं ऐसा क्यों लगा कि

हमदर्दी जैसे उन्हें कर्ज में मिली है। इसकी वसूली कभी भी हो सकती है - एक असाधारण ब्याज के साथ।

वे थककर चाय की गुमटी के पास रखी बेंच पर बैठ गए। सज्जाद भाई की चाय इस इलाके में मशहूर है। चाय में थोड़ा नमक डालते हैं। नमकीन चाय। सज्जाद चाय भी बनाते हैं और सट्टे की पर्ची भी भरते हैं। उनका छोटा बेटा इसी काम में उनकी मदद करता है। काँच के गिलासों में चाय लेकर आसपास के गैराज पर, दर्जी की दुकानों पर, फलवाले, सब्जीवालों के यहाँ दौड़ता-भागता रहता है। या फिर सट्टा लगाने वालों को पर्ची देता है।

- "मास्टर साहब चाय दूँ?"

- "हाँ!" उनकी इच्छा नहीं थी पर अनिच्छा ने उनके मुँह से स्वीकृति के बोल निकाले।

आहिस्ता-आहिस्ता चाय पीते रहे। तपेली में चाय खौल रही है। चाय की तपेली में स्टील का एक बड़ा चम्मच पड़ा है। इस कारण चाय खौलती तो है लेकिन खौलकर तपेली से बाहर नहीं गिरती है। अतिरिक्त तापमान चम्मच पी लेता है। चाय का एक घूँट लेकर वे चाय का खौलना देखते रहे। मुँह में नमकीन मिठास घुल गई। सुबह का समय है, सज्जाद भाई ज्यादा मसरूफ नहीं हैं। एक सायकल सवार गुमटी पर आकर रुका, सायकल से नीचे नहीं उतरा। कुल्हे का एक छोटा-सा हिस्सा सायकल की सीट से नीचे खिसकाया और एक पैर जमीन पर टिकाकर पूछा, - "चचा, रात को किलोज में क्या आया?"

- "मिंडी!" सज्जाद भाई ने खौलती चाय की तपेली को उठाकर चाय का उबाल नीचे किया। सायकल सवार ने बुरा-सा मुँह बनाया। जैसे चाय में नमक ज्यादा पड़ गया हो। उसने सायकल पर जोर लगाया और आगे बढ़ गया।

तमाम बातों के बावजूद दुनिया में पहले की तरह ही हलचल है। मास्टर साहब ने सोचा।

- "सज्जाद भाई!" मास्टर साहब ने पुकारा तो लगा उनकी आवाज पर भी रात की बारिश की नमी उतर आई है।

- "हाँ, मास्टर साहब!" सज्जाद भाई काँच के खाली गिलास जमाने लगे।

- "सज्जाद भाई, तुम्हें डर नहीं लगता है?"

सज्जाद भाई ने गिलास जमाना छोड़ दिया। पलटकर आए और मास्टर साहब के सामने खड़े हो गए।

- "क्या बात है मास्टर साहब?" सज्जाद भाई ने पूछा। उन्होंने डर का कारण भी नहीं पूछा। जैसे मास्टर साहब की आवाज की नमी से वह डर की तह तक पहुँच गए। सचमुच मास्टर साहब के चेहरे पर एक नम डर था।

- "डरकर रहेंगे तो जिएँगे कैसे?" धंधा कैसे चलेगा?" सज्जाद भाई ने कहा।

मास्टर साहब जानते हैं पिछले दंगों में सज्जाद भाई की गुमटी भी जला दी गई थी। बर्तन-भांडे लूट लिए थे। पीठ में तलवार का लंबा घाव है। उससे बड़ा घाव सीने के भीतर है। बड़ा बेटा उनकी आँखों के सामने काट दिया गया था। बेटे के टुकड़े बोरे में भरकर घर ले गए थे।

मास्टर साहब एक छोटा-सा शब्द बोलकर चुप हो गए।

- "क्या होगा इंतकाम से? और किससे?" सज्जाद भाई बोले। वह अभी भी मास्टर साहब के सामने खड़े हैं। सामने के बाल थोड़े उड़ गए हैं। खिचड़ी दाढ़ी के ऊपर पान से रँगे होंठ काँप रहे हैं।

- "एक बार डर गए तो बार-बार हमला होगा। कौम की मजबूती के लिए हमारे पास भी ताकतवर जवाज होना चाहिए।" मास्टर साहब बोले तो लगा जैसे उन्हें परे सरकाकर बड़े मौलवी बोले।

- "फिर इसका अंत कहाँ होगा? लड़ाई तो लड़ना है लेकिन भरोसे की लड़ाई लड़ना है। दरअस्ल सारे लोग एक दूसरे का भरोसा खो चुके हैं। यह लड़ाई लंबी तो है पर इसे लड़ना होगा।" सज्जाद भाई ने कहा तो मास्टर साहब ने गरदन उठाकर उसे देखा। एक कम-पढ़ा-लिखा चायवाला उन्हें जो बात कह रहा है कोई और वक्त होता तो उसके मुँह से अटपटी लगती।

- "कौम को कायर बनाना चाहते हो?" मास्टर साहब ने तिक्त स्वर में कहा।

- "दंगों में बहादुरी के तमगे नहीं मिलते मास्टर साहब। कलेजे के टुकड़े खोने पड़ते हैं... और खुदा का वास्ता आपको, इसे कुर्बानी मत कहना!" सज्जाद भाई बोले तो मास्टर साहब बोलते-बोलते रुक गए। वे इसी तरह की कोई बात कहना चाहते थे।

- "इस तरह तो लड़ाई बढ़ती चली जाएगी।" कुछ देर चुप रहकर मास्टर साहब बोले।

- "तो आप क्या सोच रहे हैं, सैकड़ों साल का मसला एक ही बार में निबट जाएगा? जल्दी का युद्ध महाभारत था। सुनते हैं कि अठारह दिनों में खत्म हो गया था। पर नतीजा क्या हुआ? कोई नहीं बचा।" सज्जाद भाई ने थोड़ा झुककर कहा। मास्टर साहब ने फटी-फटी आँखों से उन्हें देखा तो वे शरमा गए।

- "मास्टर साहब मैंने तो बरसों पहले स्कूल छोड़ दिया। ये इल्म की बातें मैं क्या जानूँ! मँझला बेटा जिद करके पढ़ रहा है। वकालत कर रहा है। घर में वही बहस करता रहता है। वर्ना गुस्से ने मेरे हाथों में भी हथियार दे दिया था। ज्यादा-से-ज्यादा एकाध घर किसी का फूँक देता और आज कहीं जेल में बैठा होता।" सज्जाद भाई की आवाज जैसे उनकी पनीली आँखों से निकल कर आई हो। गीली-गीली आवाज।

- "तो तसल्ली का सबक सीख गए हो?" मास्टर साहब धीरे से बोले। जैसे सज्जाद भाई से नहीं कहा हो। दूर गुमटी के पास कोई अदृश्य आदमी से कहा हो। गुमटी के पार घूरते रहे।

- "तसल्ली गाली तो नहीं मास्टर साहब?" सज्जाद भाई अब उनके पास बेंच पर बैठ गए, - "मँझला कहता है, हम अंग्रेजों से दो सौ साल लड़े? सभी लोग। हमारे बुज़ुर्गों में इतना सब्र था तो हम इतनी जल्दी हार क्यों मान लें?" तभी गुमटी पर छोटे ने आवाज दी। सज्जाद भाई उठ गए। मास्टर साहब बैठे रहे। वे सोचने लगे कि इल्म का स्कूली तालीम से कोई लेना-देना नहीं। उन्हें भी जिंदगी में एक बड़ा सबक मिलना था तो कहाँ मिला? चाय की गुमटी पर और वह भी एक लगभग अपढ़ चाय वाले से? वे हैरत में कुछ देर बैठे रहे। फिर उठकर सज्जाद भाई को चाय के पैसे दिए। सज्जाद भाई ने आदाब में हाथ उठाया तो उन्होंने सिर हिला दिया।

घर की ओर चले तो बारिश की फुहारें आने लगीं। उन्होंने परवाह नहीं की। फुहारें बहुत छोटी-छोटी बूँदों की शक्ल में उनके कपड़ों पर ठहर गई फिर धीरे-धीरे कपड़ों ने छोटी-छोटी बूँदों को सोख लिया।

सड़क से घर की गली के लिए पलटे तो देखा, अकरम मैकेनिक का गैराज खुल गया है। रात को छोटे से गैराज में ठूँस कर भरी गई मोटर सायकलें सड़क पर वापस खड़ी कर रहा है। आगे हमीद की बेकरी है। उसके पास सल्लू पान वाले की गुमटी बंद है। जहीर ने भी सायकल पंक्चर सुधारने की अपनी चलित दुकान अभी सड़क पर रखी नहीं है। वह दुकान का सारा सामान रोज शाम एक पेटी में भरकर घर ले जाता है। सुबह पेटी खोलते ही सड़क पर दुकान खुल जाती है। इसमें अकरम मियाँ को छोड़ दें तो बाकी सब नौजवान हैं। आज वे पहली बार सोचने लगे कि ये नौजवान स्कूल छोड़कर क्यों

इस तरह के छोटे-छोटे धंधों में आ गए। तालीम से इनका नाता क्यों टूट गया? ज्यादातर नौजवान इसी तरह छोटे-छोटे धंधों में लगे हैं। फिर दंगों में मौलवी साहब या मुहल्ले या शहर का कोई लीडर इनके हाथों में हथियार थमा देता है। मारते हैं या मर जाते हैं। जेल चले जाते हैं। क्या सचमुच तालीम आदमी को कायर बना देती है। सज्जाद भाई की तरह? सज्जाद भाई कायर हैं? जबकि सज्जाद भाई ने तो स्कूल के दिनों में ही तालीम को अलविदा कह दिया था। इन लड़कों को ऐसा सबक कौन दे रहा है? यह तो उन्हें अब मालूम है।

मास्टर साहब की ऐनक पर बारिश की बूँदें गिरी। उन्हें धुँधला नजर आने लगा। ऐनक के शीशे पर धुँधलापन आ गया। पर यह धुँधलापन ज्यादा देर नहीं रहा। उन्होंने ऐनक निकाली और कमीज से पोंछकर वापस पहन ली। सब कुछ साफ नजर आने लगा।

घर आकर देखा, बीवी जाग गई है। चूल्हें के लिए जमा लकड़ियों को बचाने की जुगत में लगी है। गैस का चूल्हा होने के बावजूद वह लकड़ी का चूल्हा भी जलाती है। बाँस के टट्टों से बने शेड में लकड़िया जमा रही है।

बेटी आँगन में खेल रही है। उसके साथ मोती मास्टर साहब की बेटी है। दोनों आँगन में दौड़ रही हैं। मास्टर साहब को देखकर बेटी पास आ गई।

- "अब्बा, नीलू को सफेद कबूतर चाहिए। कल पंद्रह अगस्त है। स्कूल के जलसे में मंत्रीजी सदारत करेंगे और कबूतर उड़ाए जाएँगे।" बेटी के चेहरे पर खुशी है।

- "अब्बा, इसे कल सुबह ये वाले दो सफेद कबूतर आप देंगे न?" बेटी ने मनुहार की तो वे खुश हो गए।

- "क्यों नहीं, जरूर देंगे। और कल कोई लीडर कबूतर क्यों उड़ाएगा? तुम दोनों आज ही कबूतर उड़ाओ। दिन तो आज खुशनुमा है।" मास्टर साहब ने कहा और वे बच्चियों की खुशी में शामिल हो गए।

- "पर कबूतर आज हम उड़ा देंगे तो कल स्कूल में क्या लेकर जाऊँगी? कबूतर उड़ जाएँगे तो वापस नहीं आएँगे।" मोती मास्टर साहब की बेटी ने कहा तो वे पहले मुस्कराए फिर कबूतरों को देखते हुए गंभीरता से बोले, - "कबूतर कहीं नहीं जाते। उड़कर वापस यहीं आ जाएँगे।"

दोनों बच्ची तालियाँ बजाने लगीं। मास्टर साहब को लगा कि जिंदगी में खुश होने के लिए ऐसे ही छोटे-छोटे बहाने होना चाहिए।

दोनों बच्चियों ने एक-एक कबूतर हाथों में पकड़ा और ऊपर उठाकर उछाल दिए।

कबूतर पहले तो हवा में फड़फड़ाए और फिर ऊँचे उठकर दूर उड़ गए। दूर उड़कर मुहल्ले का एक लंबा चक्कर मारकर वापस लौट आए। बच्चियाँ खुश हो गईं। उनकी हँसी आँगन में गूँजने लगी। बारिश से जैसे उनकी हँसी भी धुल गई थीं।

मास्टर साहब भीतर आकर कुर्सी पर बैठ गए। तभी बीवी भीतर आई, - "बड़े मौलवी साहब ने नूरा को भेजा है। आपको बुलाया है।"

- "कह दो, मास्टर साहब सो रहे हैं।" कहकर कुर्सी से पीठ टिका दी।

- "ऐसी सुबह, इस समय कोई सोता है?" बीवी ने घूरा।

कुछ देर उन्होंने सोचा फिर कहा, - "अच्छा तो कह दो जाग गए हैं। आना मुमकिन नहीं होगा।" कहकर उन्होंने बीवी को देखा और मुस्करा दिए। बीवी असमंजस से उन्हें देखती रही फिर बड़बड़ाती बाहर चली गई। उसने नूरा से जाने क्या कहा, लेकिन नूरा चला गया।

मास्टर साहब कुर्सी से उठे और बाहर आँगन में आए। कबूतर लौट आए थे। ये देखकर दोनों बच्चियों की खुशी अभी भी कायम है। धूप का एक छोटा-सा टुकड़ा देहरी पर पड़ा सो रहा है। कोने में सफेद गुलाब का पौधा बारिश की फुहारों में डोल रहा है। बच्चियों की दौड़-भाग से कबूतर फड़फड़ाकर उड़ते और एक जगह से उड़कर दूसरी जगह बैठ जाते। हवा में उड़ते बच्चियों की रंगीन फ्रॉक के बीच कबूतरों की सफेद उड़ान उन्हें बहुत भली लगी।

वे पलटकर भीतर गए और एक छोटा-सा चाकू ले आए। फिर सफेद गुलाब के पौधे से एक बड़ा बेहद खूबसूरत गुलाब को लंबी टहनी के साथ काटा। आँगन में ही खड़े होकर बहुत इत्मीनान से टहनी से सारे काँटें साफ किए। मोती मास्टर साहब की बेटी नीलू घर जाने के लिए कह रही थी। उसे अपने घर जाकर सभी को बताना है कि उसने कबूतर उड़ाया। अपने खास अनुभव और रोमांच को वह सभी से बाँटना चाहती है। अपने खास होने को वह सबको बताना चाहती है।

अब्दुल मास्टर साहब ने आगे बढ़कर नीलू के हाथों में गुलाब थमा दिया। बच्ची खुश हो गई। वह अपने मुहल्ले, अपने घर की ओर दौड़ी। बच्ची ने सफेद गुलाब की टहनी किसी झंडी की तरह थाम रखी है। वे देखते रहे। बच्ची उनकी गली पार करके दूर

ब्राम्हणपुरी में दाखिल हो गई। बच्ची की आकृति धुँधली नजर आने लगी। लेकिन बच्ची के हाथों में सफेद झंडी की तरह थमा सफेद गुलाब अब भी नजर आ रहा है।